Reg No 177/2008-2009 ISSN: 2322–0317

PSSH PERSPECTIVE of SOCIAL SCIENCES and HUMANITIES

An International Multidisciplinary Refereed Research Journal

VOL 2, NO 2

JULY - DECEMBER 201

Biannual

Editor

Dr Hemant Kumar Singh

Assistant Professor

Economics Department

Madan Mohan Malviya PG College

Deoria (UP)

Publisher

Herambh Welfare Society

Varanasi (India)

कामायनी की समसामयिक प्रासंगिकता

नीलम सिंह[9]

विगत अर्द्ध दशक में प्रसाद–साहित्य का भिन्न–भिन्न कोणों से मूल्यांकन किया गया है और जितने भी सूक्ष्म–स्थूल पक्ष हो सकते हैं, प्रायः सभी समीक्षकों की लेखनी का विषय बन चुके हें। फिर भी प्रसाद–साहित्य ऐसे गम्भीर प्रशान्त महासागर के समान है जिसमें जितना ही अवगाहन किया जाये उतने ही श्रेष्ठ, अमूल्य और नवीन रत्नों की समुपलब्धि सम्भव है। उनका कथ्य इतना सशक्त और सारगर्भित है, कि ज्यों–ज्यों मनन्–चिन्तन किया जाये उसके नित नवीन आयाम उद्घाटित होते हैं। समीक्षकों ने अधिकांशतः उन्हें रोमानी कवि करार देते हुये उनके साहित्य पर वायवीयता, वैयक्तिकता और काल्पनिकता का आरोप लगाना है, यहाँ तक कि कुछ ने तो उन्हें आभिजात्य बुर्जुवावादी और पूँजीवादी वर्ग का हिमायती घोषित करके वर्ग–विद्वेष और संघर्ष का अस्त्र बनाने का प्रयास किया, किन्तु समय की माँग है कि प्रसाद–साहित्य को हम अपनी संकीर्ण दृष्टि के कठघरे से बाहर निकल कर मापें, परखें और उसे अपनी प्रतिबद्ध और दुराग्रही दृष्टि का ग्रास न बनायें।

कवि अपने चिन्तन और भाव–सम्पदा के माध्यम से युग–युगों तक जीवित रहता है तथा उसकी कृतियों से विश्व को नव जीवन के मंगल सूत्र मिलते हैं। कवि दृष्टा भी होता है और सृष्टा भी। जीवन और जगत के यथार्थ से उसके मनोमस्तिष्क में जो प्रतिक्रिया होती है, वही उसकी लेखनी से अभिव्यक्ति पाती है। जो रचनाकार सीमित और प्रतिबद्ध दृष्टि से वर्ग–स्वार्थों के कठघरे में कैद होकर भावाभिव्यक्ति करते हैं, उनके साहित्य का कारवां सीमित समय के मरूस्थल में खो जाता है, किन्तु जो रचनाकार व्यापक दृष्टि रखते हुये चिरन्तन समस्याओं को अभिव्यक्ति देते हैं, उनकी वाणी विश्व–मानवता की वीणा पर युग–युग तक झंकृत होती रहती है।

प्रसाद का साहित्य ऐसी ही चिरन्तन सांस्कृतिक चेतना से अनुप्रमाणित है, जिसमें समाज, देश और युग की सीमाओं से ऊपर उठकर मानव–जाति की शाश्वत समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया गया है। इसीलिये एक ओर वे अतीत से वर्तमान की प्रेरणा देते हैं तो दूसरी ओर उनका वर्तमान भविष्य के नव–निर्माण की नींव रखता है। उनके काव्य में अतीत की अभिव्यक्ति साध्य रूप से नहीं प्रत्युत साधन रूप से हुई है। उन्होंने जीवन को एक सम्पूर्ण इकाई के रूप में स्वीकार करते हुये समाज के मध्य संतुलन को महत्व दिया है। उनकी मानवता देश और वर्ग में विभाजित न होकर सम्पूर्ण

[9] नेट, जे०आर०एफ०, शोध कार्य (हिन्दी विभाग), दी०द०उ०गो०वि०वि० गोरखपुर

विश्व–परिवार तक प्राप्त–व्याप्त है, इसीलिये देशकाल की सीमायें उनकी साहित्य–धारा के प्रवाह का बंधन नहीं बन सकतीं। उन्होंने तो पौराणिक और ऐतिहासिक प्रसंगों को नवीन समसामयिक संदर्भों में ढालकर भावी मानवता के भव्य महल के लिये गहरी नींव तैयार करने का कार्य किया है, इसलिये उनका साहित्य मृत्युय्ज्यी है। उनके जीवन काल में वह जितना प्रासंगिक था, आज उससे भी अधिक प्रासंगिक हैं जिन विडम्बनाओं, अभावों और पारस्परिक दूरियों में सामरस्य उत्पन्न करने की आवश्यकता प्रसाद जी ने निरूपित की है वे बुद्धिवादी विज्ञान–प्रसूत जटिलतायें, अभाव और दूरियाँ निरन्तर बढ़ती ही गयी हैं, जिस वैयक्तिक स्वार्थ को उन्होंने विश्व–मानवता के विकास के मार्ग में बाधक मानकर धिक्कारा है, वह निरन्तर और निरन्तर बढ़ता ही तो जा रहा है। कामायनी के कर्म सर्ग में आज की स्वार्थी मानवता को ही चेतावनी देती हैं उसकी ये पंक्तियाँ–

अपने में सब कुछ भर कैसे व्यक्ति विकास करेगा।
यह एकान्त स्वार्थ भीषण है, अपना ही नाश करेगा।।[1]

व्यक्ति और समाज का असंतुलन मानव इतिहास की चिरन्तन समस्या है, वर्तमान मानव समाज भी इसी वैषम्य और असंतुलन से ग्रस्त है। भौतिक प्राणी किस प्रकार अपने क्षणिक व्यक्तिगत स्वार्थ के लिये सामाजिक हितों की बलि चढ़ रहा है, क्षणिक तृप्ति की मृगतृष्णा में बुद्धिवाद से ग्रस्त एकांगी मानवता अपने को ही संतप्त करने में निरन्तर व्यस्त है, वैयक्तिक जीवन सामाजिक जीवन से विलग होकर नैतिकता के ह्रास और विश्रंखलन का कारण बन रहा है, यह आज किसी से छिपा नहीं है। यह पाश्चात्य संस्कृति और सभ्यता के घनघोर प्रभाव का युग है और विज्ञान की व्यापकता के साथ–साथ भारतीय चिन्तन में असंतुलन पैदा हो गया है। मार्क्स और डार्विन के सिद्धान्त मानव–इतिहास की भौतिक व्याख्या करके बुद्धिजीवी विदेशी संस्कृति को प्रसार दे रहे हैं तथा आत्म तत्त्वों का तिरस्कार हो रहा है। इसी बुद्धिवाद और वैज्ञानिकता के अतिरेक के विश्वव्यापी प्रभाव से उत्पन्न मानव अशान्ति और उधार ली हुयी ह्रासोन्मुखी पाश्चात्य सभ्यता को भारतीय भारतीय संस्कृति पर आरोपित होते देखकर कवि प्रसाद का सम्वेदनशील हृदय संस्कृति की नवीन, व्यावहारिक और विकासोन्मुखी व्याख्या करने को तत्पर हो उठा तथा व्यक्ति और समाज में व्याप्त असंतुलन को संतुलित और समन्वित रूप देकर उन तत्त्वों की खोज में रत हुआ, जो मांगलिक कार्यों में सहायक हो सकें। भौतिकवाद की जड़ता में आनन्द की कामना करने और बुद्धिवादियों की विज्ञान की अति से विकृत मनीषा को उचित दिशा देने के लिये उन्होंने हृदयवादी भारतीय संस्कृति के आत्म तत्त्वों से प्रेरणा ग्रहण की। डॉ. रामलाल सिंह ने लिखा है कि ''उस समय हमारे देश के लोग विदेशी सभ्यता और संस्कृति के वाह्य और क्षणिक आकर्षण में अपनी सभ्यता और संस्कृति को भूल रहे थे। ऐसे सक्रान्ति काल में एक ऐसे महान कलाकार की दिव्य एवं प्रभविष्णु वाणी की आवश्यकता थी, जो भूले हुये लोगों को कलात्मक ढंग से यह समझा सके कि तुम्हारा वास्तविक कल्याण एवं विकास उसी संस्कृति को अपनाने में है, जो तुम्हारे देश की जल–वायु, प्राकृतिक दशा तथा उपज के अनुकूल है। यह कार्य उस युग में महान कलाकार प्रसाद की कृतियों द्वारा

हुआ– विशेषतः उनके महाकाव्य 'कामायनी' द्वारा। मनु जब तक हृदयवादी संस्कृति की प्रतीक श्रद्धा को छोड़ बुद्धिवादी संस्कृति की प्रतीक इड़ा के मोहपाश में बंधा रहता है, तब तक उसका कल्याण नहीं होता।''[2]

आज भी परिस्थितियाँ बहुत बदली नहीं हैं, स्वतन्त्रता तो मिल गयी है, किन्तु साथ ही विदेशी सभ्यता और संस्कृति के प्रति आकर्षण भी बढ़ गया है। आज हम अपनी राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुकूल अपना नियोजन नहीं करते, बल्कि विदेशी योजना पद्धति का अनुकरण करते हैं। कवि प्रसाद भारतीय इतिहास और संस्कृति के गहन अध्येता थे और जानते थे कि आधुनिक युग की इस विषमता का समाधान परम्पराओं से कट कर नहीं ढूँढ़ा जा सकता बल्कि आधुनिकता के कच्चे माल को भारतीय पुराण और इतिहास के सांस्कृतिक सांचे में ढाल कर ही अपनी राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुकूल नयी सभ्यता का विकास किया जा सकता है। मानव–संस्कृति मात्र जड़ता का इतिहास नहीं है, बल्कि चेतना का सुन्दर इतिहास है, जिसमें अखिल मानवीय भावनाओं का सत्य समाया है। अतः विश्व के हृदय–पटल पर इसी मानवीय भावनाओं के सत्य से आलोकित चेतना के सुन्दर इतिहास को अंकित करना होगा तथा श्रेय और प्रेय के समन्वय से मानव–कल्याण की ओर अग्रसर होना होगा।

नृतत्व विज्ञान इस युग में पूर्णतः विकसित हो चुका है तथा डार्विन से लेकर मार्क्स आदि सभी पाश्चात्य विचारकों द्वारा प्रस्तुत विश्व–इतिहास की भोतिक व्याख्या अपने चरम उत्कर्ष पर हैं यह सिद्ध हो चुका है कि मानव जाति का उदय पूर्णतः प्राकृतिक है। डार्विन के यांत्रिकतावादी दर्शन के आधार पर विविध जातियों का अध्ययन सम्भव माना गया है। इस प्रकार बीसवीं शताब्दी में मानव विकास और मनोविज्ञान का भौतिक चिन्तन बहुत आडम्बर के साथ प्रस्तुत हुआ है। इन भौतिकवादी और यांत्रिकतावादी दर्शनों के प्रकाश में मानवीय इतिहास और संस्कृति की जड़तावादी व्याख्या प्रस्तुत होने लगी हैं वैज्ञानिक अनुसंधानों द्वारा प्रकृति पर विजय पाने का दम्भ लेकर मनुष्य ने विजयी बनने का मार्ग खोज लिया है। जड़ बुद्धिवाद मनुष्य के अहंकार का सम्वर्द्धन करने लगा है। इड़ा सर्ग में प्रसाद जी ने इस तथ्य को स्वीकार किया हैः–

हाँ, तुम ही तो अपने सहाय,
जो बुद्धि कहे उसको न मानकर फिर किसी नर शरण जाय
जितने विचार संस्कार रहे, उनका न दूसरा है उपाय
यह प्रकृति परम रमणीय अखिल ऐश्वर्य भरी शोधक विहीन
तुम उसका पटल खोलने में परिकर कस कर बन कर्मली न
सबका नियमन शासन करते बस बढ़ा चलो अपनी क्षमता
तुम ही इसके निर्णायक हो, हो कहीं विषमता या समता
तुम जड़ता को चैतन्य करो विज्ञान सहज साधन उपाय
यह अखिल लोक में रहे छाय।[3]

आज भी कौन जाने मनुष्य के इसी दम्भ पर आकाश हंस रहा हो और इस

विषम विकास की नश्वरता पर नियति व्यंग्य कर रही हो–
हँस पड़ा गगन वह शून्य लोक
जिसके भीतर बसकर उजड़े कितने ही जीवन–मरण शोक। [4]

कवि प्रसाद की संस्कृति का अर्थ परम्परा, पुरातनता या स्थिरता में नहीं बल्कि देशकाल परिस्थिति के अनुसार अभिनवता में निहित है। चाहे प्रकृति हो अथवा मानव–संस्कृति, परिवर्तन के अभाव में विकास अवरूद्ध हो जाता है। कवि प्रसाद युग–परिवर्तन के लिये सतत् प्रयत्शील रहे परन्तु वे मोहासक्त नहीं थे और न ही नवीनता के लिये पागल कि जीवन के हानि–लाभ, उत्थान–पतन का ही ध्यान नहीं रखते। उन्होंने साध्य और साधन का अन्तर समझा और अतीत के अनुभव के आधार पर ही भविष्य का विकास–क्रम निश्चित किया। उन्होंने अन्धी वैज्ञानिकता से उद्भूत जटिलताओं और विडम्बनापूर्ण आधुनिक युगीन समस्याओं का विश्लेषण कर उनका वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत किया। विज्ञानमयी अधिकार–प्रमत्त–संस्कृति अंत में संघर्ष, विद्रोह और असफलता को जन्म देती है अतः उसे श्रद्धायुक्त करके उन्होंने मानव–मूल्यों की स्थापना की। वे मानव–जीवन की सार्थ–भौमिकता और महत्ता को लेकर चले तथा ऐसी समस्याओं को उठाया जो कि युग विशेष अथवा काल विशेष तक सीमित न होकर, समस्त मानव जाति के चिरकालिक जीवन से सम्बन्धित हैं तथा प्रत्येक नवागत पीढ़ी के अभ्युदय में सहायक हैं। आचार्य नंद दुलारे बाजपेयी की भी मान्यता है कि– ''प्रसाद जी का साहित्य सच्चे अर्थों में नवीन जीवन से सम्बद्ध है और वह आधुनिक समस्याओं को प्रतिविम्बित करता है, वह साम्प्रतिक जीवन का उन्नायक है''। [5] प्रसाद जी ने संकुचित अर्थों में जीवन की आर्थिक व्याख्या प्रस्तुत नहीं की और न भौतिक जीवन के सामयिक प्रश्नों का हल हिंसात्मक क्रान्ति में ढूँढने का प्रयास किया बल्कि उन्होंने जीवन के यथार्थ को पकड़ कर उसका आदर्श समाधान प्रस्तुत किया। उन्होंने प्रगतिवादियों की तरह वस्तु–जगत को विकृत बना कर प्रस्तुत करने में ही यथार्थ की इतिश्री नहीं समझी बल्कि वे मानव की सर्वतोमुखी प्रगति के समर्थक थे। एकांगी भौतिकवाद का विरोध करते हुये उन्होंने जीवन की भावगत व्याख्या प्रस्तुत की तथा पतनशील मानवता को निरन्तर गतिशील रहकर आनन्दमय चरम विकास की ओर उन्मुख किया और इलेक्ट्रोन एवं प्रोटोन के समन्वय से मानव को प्रकृतिजयी होने की प्रेरणा दी।

शक्ति के विद्युतकरण जो व्यस्त विकल बिखरे हैं हो निरूपाय,
समन्वय उनका करे समस्त विजयिनी मानवता हो जाय। [6]

उन्होंने विदेशी प्रभावों से आक्रान्त कामवृत्ति का संस्कार कर भारतीय परम्पराओं के अनुसार काम का विस्तृत अर्थ प्रस्तुत किया। फ्रायड ने जिस काम को मात्र मनोदैहिक व्यापार प्रमाणित किया था, उसे प्रसाद ने जीवन की मांगलिक शक्ति के रूप में स्थापित कर श्रेय–प्राप्ति का साधन माना। इस प्रकार सम्पूर्ण प्रसाद–काव्य आशावादी स्वस्थ जीवन–दर्शन को लेकर विश्व की कल्याणमयी प्रगति में तत्पर है। उसमें सतही जीवन दृष्टि न होकर भावात्मक गहराई है, जो कर्तव्य–भावना से अनुप्रमाणित है तथा जीवन–निर्माण की प्रेरक शक्ति आशा और आस्था को संजोये हुये कर्म–मार्ग की साधना का है। इन अर्थों में प्रसाद का काव्य आज तो सर्वथा प्रासंगिक है ही, यावत्

मानव–जीवन प्रासंगिक ही रहेगा।

सन्दर्भ सूची

1. कामायनी, कर्म सर्ग–पृष्ठ 128
2. डॉ. राम लाल सिंह, कामायनी अनुशील–पृष्ठ 204
3. कामायनी, इड़ा सर्ग : पृष्ठ–164
4. कामायनी, इड़ा सर्ग : पृष्ठ–179
5. जयशंकर प्रसाद : आचार्य नंद दुलारे बाजपेयी : पृष्ठ–3
6. कामायनी, श्रद्धा सर्ग : पृष्ठ–63